पण्डित बिशन नारायण दर

जब भी किसी व्यक्ति ने अपने समय के सामाजिक बन्धनों को तोड़ने का प्रयास किया है, उसे ऐसा करने की काफी बड़ी कीमत चुकानी पड़ी है। इतिहास ऐसे अनेकों उदाहरणों से भरा पड़ा है जहाँ महान विचारकों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा है क्योंकि लोग अपने समय में प्रचलित विचारों से भिन्न बात मानने को तैयार नहीं हुए। हम भुला नहीं सकते कि कैसे ईसा मसीह को सूली पर चढ़ा दिया गया, सुकरात को विष का प्याला पीना पड़ा और निरपराध महात्मा गांधी को गोलियाँ मारी गयी, क्योंकि उनके समय में कुछ लोग उनके सम्पूर्ण मानव जाति के हित के सिद्धान्तो, आदर्शों को मानने को तैयार न थे।

ऐसे ही पण्डित बिशन नारायण दर को उनके समाज के लोगों ने विलायत से बैरिस्ट्री की पढ़ाई पूरी करके भारत वापिस आने पर बिरादरी से बाहर कर दिया क्योंकि उस समय समुन्दर पार की यात्रा अक्षम्य अपराध मानी जाती थी। यद्यपि ऐसा करके उन्होने इतिहास रच दिया "वह प्रथम कश्मीरी पण्डित और प्रथम भारतीय थे जो बैरिस्टर बने"।

परिवार का इतिहास

बैरिस्टर पण्डित बिशन नारायण दर के पूर्वज कश्मीर में श्रीनगर तहसील के पुरूषयार से, अवध के नवाब आसफुद्दौला के शासन काल में लगभग 1780 में लखनऊ आकर सपरिवार कश्मीरी मोहल्ले में बसे। उस समय ऐसा चलन था कि कश्मीरी पण्डित इक्ट्ठा एक ही स्थान पर रहना पसन्द करते थे ताकि उनकी विशिष्ट पहचान बनी रहे और सामाजिक बन्धन मजबूत रहें। पण्डित दाताराम दर के दो पुत्र थे ,रति राम दर जो लगभग 1798 और पण्डित दिला राम दर सन् 1800 में पैदा हुए थे। दिलाराम दर का बेटा टीकाराम दर 1820 में पैदा हुआ था, उनका छापा खाना था, जहाँ शाही फरमान और सनदें इत्यादि छापी जाती थी। टीकाराम दर ने सन् 1857 के ग़दर में प्रमुख भूमिका निभायी। वह अंग्रेज़ों के विरूद्ध पर्चे छापकर बाँटते थे ताकि स्थानीय लोगों को अंग्रेजों की बर्बरता का पता चल सकें। अंग्रेज़ी गुप्तचरों की पैनी दृष्टि से बचने के लिए वह गोमती नदी पर एक बड़ी नाव पर अपना कार्य संचालित करते थे और थोड़ा सा भी सन्देह होने पर एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते थे। ऐसा कहा जाता है कि वह ग़दर के बाद लखनऊ छोड़कर बनारस में स्थायी रूप से रहने लगे।

रतीराम दर के एक पुत्र हरीराम दर जो लगभग सन् 1820 में पैदा हुए थे को नवाब वाजिद अली शाह ने अपना अख़बारनवीस बनाया। ऐसा कहा जाता है कि वे नवाब के इतने क़रीबी थे कि जब अंग्रेज़ों ने वाजिद अली शाह को गिरफ्तार कर कलकत्ते में मटियाबुर्ज में रखा तो हरीराम दर भी उनके साथ चले गये। हरीराम दर के चार लड़के थे– किशन नारायण, जगत नारायण, काशी नारायण तथा राज

नारायण। जगत नारायण दर के दो बेटे प्राण नारायण और धर्म नारायण के अलावा तीन बेटियाँ ललिता (लस्सो), मथुरा तथा पार्वती (पत्तो) थी।

काशी नारायण दर जो लगभग सन् 1848 में पैदा हुए थे के दो बेटे स्वरूप नारायण और रूप नारायण और दो बेटियाँ चन्द्रा एवं दुर्गा थी। स्वरूप नारायण दर सन् 1869 में पैदा हुए और उन्होंने दो विवाह किये पहली पत्नी से एक लड़का श्री नारायण और एक लड़की शारिका जिनका विवाह पुष्कर नाथ सोपोरी से हुआ। श्री नारायण दर के तीन बेटे – आनन्द नारायण, त्रिभुवन नारायण तथा शान्ती नारायण और दो लड़कियाँ विद्या जिसका विवाह दिल्ली के परमेश्वरनाथ टोपा और लीला का विवाह ग्वालियर के अवतार किशन जुत्शी से हुआ। स्वरूप नारायण दर की दूसरी पत्नी जवाहर रानी जो आगरा के विशम्भरनाथ दर की बेटी थी के दो पुत्र हुए– इन्दर नारायण तथा अवतार नारायण एवं तीन पुत्रियाँ – ज्वाला, कान्ता और विजयलक्ष्मी। स्वरूप नारायण दर की मृत्यु सन् 1931 में हुई।

रूप नारायण दर अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद ग्वालियर स्टेट में जज नियुक्त हुए, उनका विवाह बृज कुमारी (रूपरानी), लखनऊ के शिवनाथ चक की बेटी से हुआ। ऐसा कहा जाता है कि , उनके पास एक तवायफ़ भी थी। उस समय में ऐसा करना उच्च समाज में शान मानी जाती थी और वह ग्वालियर के मुरार में उनके घर के सामने रहती थी। उनके तीन बेटे थे : कैलाश नारायन, महाराज नारायण और प्रकाश नारायन। कैलाश नारायन का विवाह कृपा कौल से हुआ। ऐसा कहा जाता है कि उनके पास एक बेग़म भी थी, लेकिन वह जीवन पर्यन्त पक्के हिन्दू रहे। उनकी तीन बेटियाँ थी : कामिनी, पद्मा और रानी।

महाराज नारायन दर ने आराम का जीवन बिताया और कुछ नहीं किया। वह अपना समय उर्दू शायरी करने में बिताते थे। उनका विवाह लखनऊ के कश्मीरी मोहल्ले के नन्दूलाल हक्कू की बेटी दुलारी से हुआ था। उनके तीन बेटे – राजेन्द्र, सुरेन्द्र और अरूशा तथा तीन पुत्रियाँ कीर्ति का विवाह राधे रैना, गार्गी का धनपाल शर्मा और राधा का प्रदीप किचलू से हुआ।

प्रकाश नारायन दर सन् 1917 में पैदा हुए उनका विवाह मान नाथ मूट्टू की बेटी किरन से हुआ, उनकी मृत्यु सन् 2000 में हुई। उनके दो बेटे मनमोहन और रवि और एक पुत्री मालिनी जिसका विवाह अवतार नाथ यक्ष से हुआ।

राज नारायण दर का कोई पुत्र न था, उन्होंने अपना भतीजा गोद लिया, जो किशन नारायण दर का बेटा था, उसका नाम तेज नारायण दर था। उसका विवाह कश्मीरी मोहल्ले के प्राणनाथ बजाज की बेटी बिलास से हुआ। तेजनारायण दर के एक पुत्र सूरज नारायण तथा दो पुत्रियाँ – रूपन का विवाह जोधपुर के ब्रजमोहन नाथ हुक्कू और नानो का विवाह जोधपुर के राम नारायन गुर्टू से हुआ। सूरज नारायन दर ब्रिटिश भारतीय सेना में शामिल हुए और बिग्रेडियर के रैक तक पहुँचे, नौकरी से रिटायर होने पर वह दिल्ली में बस गए। उनका एक पुत्र विक्रम और एक पुत्री मिलन जिसका विवाह ब्रहम नारायन बहादुर से हुआ। हरि नारायण दर का सबसे बड़ा बेटा किशन नारायण दर लखनऊ में सन् 1845 में पैदा हुआ तथा अपनी पढ़ाई पूरी करके तत्कालीन यूनाइटेड प्रोविन्सेस में जूड़ीशियल सेवा में मुन्सिफ़ का काम किया, उसके

पश्चात् वह पदोन्नत होकर फैज़ाबाद में जज नियुक्त हुए। वह तरक्की पसन्द विचारों के व्यक्ति थे और पण्डित शिव नारायण बहार के प्रशंसक थे जो उस समय अनेक विषमताओं के होते हुए भी कश्मीरी मोहल्ले में पण्डितों के लड़कों को अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रति प्रोत्साहित कर रहे थे। शिवनारायण दर की मृत्यु के पश्चात् किशन नारायण दर ने सन् 1875 के लगभग लखनऊ से छपने वाली बिरादरी की प्रथम पत्रिका मुरसला–ए–कश्मीर के सम्पादन का भार संभाला। उनके सात पुत्र थे – बिशन नारायण, हृदय नारायण, हर नारायण, तेज नारायण, कृपा नारायण, उदित नारायण, रत्न नारायण। इसके अतिरिक्त इनकी दो पुत्रियाँ श्रीमती लाडो रानी जुत्शी और श्रीमती दुलारी मल थी।

हृदय नारायण दर के दो बेटे प्रेमनारायण और उत्तम नारायण के अलावा एक पुत्री शन्नो जिसका विवाह लंगर परिवार में हुआ। प्रेमनारायण दर कश्मीर चले गये तथा वहाँ वन विभाग में अधिकारी नियुक्त हुए। उनके एक पुत्र गोविन्द और एक पुत्री ऊषा थी। उसने पहले लखनऊ कोऔपरेटिव पेपर मिल्स में काम किया, व नौकरी छोड़ने के पश्चात् श्रीमती दुलारी मल के कश्मीरी होटल लालबाग़ लखनऊ में काम किया। उत्तम नारायण दर का विवाह कुसुम जो ज्ञानेश्वर नाथ हुक्कू की बेटी थी से हुआ। उनकी दो लड़कियाँ कमल और लक्ष्मी तथा एक बेटा कपिल था, जिसका विवाह बाराबंकी के कैलाश नाथ मुट्टू की पुत्री माया मुटटू से हुआ।

उदित नारायण दर का जन्म सन् 1888 में और मृत्यु सन् 1965 में हुई उनके तीन बेटे थे – जगपाल नारायण, जगदीश नारायण और कुँवर नारायण (गनेश) तथा तीन बेटियाँ – रूप किशोरी, महाराज किशोरी तथा गिरिराज किशोरी थी। कुँवर नारायण दर सन् 1920 में पैदा हुए उन्होंने भारतीय रेलवे में नौकरी की तथा सन् 2000 में उनकी मृत्यु लखनऊ में हुई। उनका विवाह लखनऊ के रानी कटरा के मदन मोहन किशन मसलदान की बेटी किशन (शोभा) से हुआ उनके तीन पुत्र प्रमोद, विनोद और सुबोध थे।

पंडित बिशन नारायण दर यूनाइटेड प्रौविंसेस की बाराबंकी तहसील में सन् 1864 में जन्मे थे। संयोग से इसी वर्ष लखनऊ में कैनिंग कॉलेज की भी स्थापना हुई थी। अवध के वे तालुक़ेदार जो अंग्रेज़ों के समर्थक थे कि भारतीय छात्रों को अंग्रेज़ी की शिक्षा दी जाय, लार्ड कैनिंग की याद में जो अंग्रेज़ों द्वारा अवध को ब्रिटिश साम्राज्य में मिलाने के समय भारत में गर्वनर जनरल और भारत के पहले वाइसराय नियुक्त हुये थे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के स्थानीय सिपाहियों द्वारा सन् 1857 के ग़दर को कुचलने के बाद लार्ड कैनिंग ने सन् 1858 में इलाहाबाद के किले की प्राचीर से महारानी विक्टोरिया का ऐलान सुनाया था, जिसमें उस समय इलाहाबाद को देश की राजधानी बनाया गया था और इस प्रकार भारत में विक्टोरियन युग का प्रारम्भ हुआ।

पण्डित बिशन नारायण दर के पूर्वज दाताराम दर ने अट्ठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में कश्मीर घाटी से पलायन किया। उनके दादा पण्डित हरीराम दर ने पूरे उत्तरी भारत में अच्छी नौकरी की खोज की तथा अन्त में उन्हें नवाब वाजिद अली शाह जो अवध के अंतिम शासक थे तथा उस समय कलकत्ते के मटिया बुर्ज में एक बन्दी के रूप में दिन गिन रहे थे, का अख़बार नवीस बनने में सफलता मिली। उन्हें

अंग्रेज़ों ने सन् 1856 में सिंहासन से उतारकर लखनऊ से कलकत्ते भारी सैन्य सुरक्षा के साथ फोर्ट विलियम्स में रहने को भेजा था क्योंकि उस समय लखनऊ में सिंहासन से हटाने पर हालात बेक़ाबू हो गये थे। पण्डित टीकाराम दर के (चचेरे) भाई पण्डित हरीराम दर का छापाख़ाना था। सन् 1857 के ग़दर के समय पण्डित टीकाराम दर ने अंग्रेजों के खुफ़िया जो क्रान्तिकारियों की सूचनायें एकत्र करते थे से बचने के लिए अपने छापाख़ाने को गोमती नदी पर एक बड़ी नाव में स्थापित किया था, वहाँ से अंग्रेजों के विरूद्ध पर्चे छपाकर लखनऊ के नागरिकों में बाँटे जाते थे ताकि वे विप्लव में भाग लें, जब अंग्रेजी गुप्तचरों से बचने में कठिनाई होने लगी तो पण्डित टीकाराम दर बड़ी सावधानी से वाराणसी जा बसे ताकि अंग्रेजों द्वारा देशद्रोही घोषित किये जाने से बच सकें।

चूंकि लखनऊ में पण्डित विशन नारायण दर के पिता मुन्सिफ़ नियुक्त हुए थे अतः उनका परिवार बाराबंकी से लखनऊ आ गया था तथा सन् 1857 के ग़दर के बाद फिर से सन् 1860 में कश्मीरी मोहल्ले में बस गया। बेगम हज़रत महल के नेतृत्व में हुए विद्रोह को दबा देने के बाद अंग्रेज़ों का लखनऊ पर पूर्ण अधिकार हो गया था। उन दिनों लखनऊ के कश्मीरी मोहल्ले में कश्मीरी पण्डितों की घनी बस्ती थी। पण्डित बिशन नारायण दर की प्राथमिक शिक्षा उस समय के अनेकों कश्मीरी लड़कों की तरह लखनऊ में हुई उन्होने सन् 1884 में कैनिंग कॉलेज से ग्रेजुएशन किया जो उस समय कलकत्ता विश्वविद्यालय से सम्बद्ध था। कैनिंग कॉलेज में उनका सम्पर्क पण्डित प्राणनाथ बजाज से हुआ, जो वहाँ शिक्षक थे। पण्डित प्राणनाथ बजाज सन् 1850 में लामार्टनियर कॉलेज में छात्र थे। अतः उनका दृष्टिकोण अपने समय के अन्य कश्मीरियों की अपेक्षा बहुत व्यापक था। वास्तव में उन्होने ही पण्डित बिशन नारायण दर को उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड की यात्रा के लिए प्रेरित किया, जिसको तत्कालीन बिरादरी ने अपने पूरे समाज के लिए दुर्भाग्यपूर्ण माना और उस समय की कट्टर विचारधारा के कारण उसका घोर विरोध किया। अतः ऐसी विरोधी परिस्थितियों में जब अपनी बिरादरी का कोई सहयोग नहीं था। पण्डित बिशन नारायण दर के पास यही विकल्प बचा कि चुप चुपाते अपनी यात्रा का कार्यक्रम बनाते ताकि कोई बुरे हालात न बन जाते और उनके माता पिता को शर्मसार न होना पड़ता। अपने मित्रों व शुभचिन्तकों से वह किसी प्रकार रू0 3000/— मात्र एकत्र कर सन् 21 मार्च 1884 को अपने शिक्षक प्रोफ़ेसर गौल के साथ लंदन यात्रा पर गये। बम्बई से जहाज द्वारा यात्रा से पूर्व उन्होंने अपने पिता से इंग्लैण्ड में रहने के लिए और पैसा माँगा। लखनऊ में उनके पत्र ने आग में घी का काम किया। उनके चुप चुपाते इंग्लैण्ड चले जाने का समाचार कश्मीरी मोहल्ले के कश्मीरी पण्डित परिवारों में जंगल में आग की तरह फैला और बिरादरी की औरतों में विशेषकर क्रोध का तूफान उठा दिया।

अतः 01 जून 1884 को 'गंजू वालों का शादीखाना' स्थान पर बिरादरी की एक मीटिंग आयोजित की गयी, जिसमें पण्डित बिशन नारायण दर के पक्ष और विपक्ष में भारी हंगामे के बाद बिरादरी दो समूहों में बँट गयी। यह दो समूह बिशन सभा और धर्म सभा कहलाये।

कश्मीरी मोहल्ले में रहने वाले अधिसंख्य कश्मीरी पण्डितों के पास विशाल ग्रामीण जायदाद थी और वे जमींदार थे। अपने धनबल के चलते उनका समाज पर बहुत प्रभाव था। ये घोर रूढ़िवादी और परम्परावादी लोग समाज में किसी प्रकार का बदलाव नहीं चाहते थे, ऐसे लोग पण्डित राज नारायण बख्शी के नेतृत्व में धर्मसभा में शामिल हुये। यह जीवन में पाश्चात्य् तौर तरीकों के घोर विरोधी थे। जबकि अल्पसंख्य कश्मीरी पण्डित उन्नतशील विचारों के कारण पुराने रीति रिवाजों, रूढ़ियों के विरोधी थे और पण्डित बिशन नारायण दर की इंग्लैण्ड यात्रा के पक्षधर थे – बिशन सभा में सम्मिलित हुए। इनमें प्रमुख दीवान अमरनाथ कौल, पण्डित त्रिभुवन नाथ सप्रू 'हिज्र', पण्डित रतन नाथ दर 'सरशार' , पण्डित बैजनाथ कौल, पण्डित उदित नारायण चकबस्त, पण्डित लालता प्रसाद बटपोरी थे। समाज का यह विभाजन यद्यपि लखनऊ में हुआ किन्तु ध्यान देने योग्य यह है कि इसका दूरगामी प्रभाव हुआ, लाहौर का कश्मीरी समाज भी इसी प्रकार दो भागों में बँट गया क्योंकि लाहौर और लखनऊ की कश्मीरी बिरादरी में वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होते थे। लाहौर से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र ट्रिब्यून में इस विषय पर अनेकों लेख भी छपे तथा इस अंग्रेज़ी पत्रिका ने पण्डित बिशन नारायण दर का घोर विरोध किया। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इस घटना से पूर्व सन् 1834 में पण्डित मोहनलाल जुत्शी का भी कश्मीरी समाज से बहिष्कार किया गया था क्योंकि उन्होने अरब देशों की विस्तृत यात्रायें की थी। स्वदेश वापसी पर इस अभागे कश्मीरी पण्डित की उनके समाज ने ही इतनी अधिक निन्दा और घोर विरोध किया कि उन्होंने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया क्योंकि तत्कालीन समाज में कोई भी उनका पक्ष लेने वाला नहीं था।

यहाँ यह विचारणीय है कि नवयुवक बिशन नारायण दर, पण्डित शिव नारायण बहार के शिष्यों में एक्टिव मेम्बर थे, उन दिनों कश्मीरी मोहल्ले से छपने वाले मुरसालए कश्मीर के पण्डित शिवनारायण बहार सम्पादक थे। इस समूह ने पहली बार लगभग सन् 1870 में पण्डित शिव नारायण बहार के संरक्षण में 'कश्मीरी यंग मेन्स क्लब की स्थापना की थी।इस क्लब का उद्देश्य कश्मीरी पण्डित लड़कों में अच्छी आदतों का संचार करना था, ताकि वे नवा़बी बुरी आदतों जैसे चौक में तवायफ़ों के कोठे पर जाना छोड़े, ये बातें उनकी पढ़ाई में ध्यान देने पर बाधा बन रहीं थी।

यह क्लब उन्हें आधुनिक समाज की सूचनाएँ, रहन सहन के उन्नत तौर तरीकों की जानकारी प्रदान करता था ताकि कश्मीरी पंडित लड़के बिना कठिनाई और हिचक के जीवन के हर क्षेत्र में दूसरों की बराबरी कर सकें।

अब इन सब नए प्रयोगों का देश में,नवयुवक बिशन के मन पर क्या प्रभाव रहा होगा जो सुदूर इंग्लैड़ में मातृभूमि से दूर कानून की पढ़ाई कर रहे थे इसका अनुमान लगाया जा सकता है।

विदेशी धरती पर बिशन नारायन दर की मानसिक दशा का सहज अनुमान लगाया जा सकता है। उनके एक भाषण से जो 4 नवंबर 1886 को लंदन में कारलाइल सोसाइटी में दिया था, उसमें 1886 में अपने भारत छोड़ने का वर्णन किया था।' मैं अपनी जाति में प्रथम व्यक्ति हूँ जो इंग्लैड जाना चाहता था। मुझे अपनी हर बात को छिपाकर करना था। केवल कुछ मित्रों एवं कुछ रिश्तेदारों के अतिरिक्त मेरे

इरादे का पता किसी को नहीं था। मेरे भारत छोड़ने की हलचल में मेरे सहयोगियों का जाति बहिष्कार कर दिया गया । मुझे एक तार भी मिला जब जहाज़ सुएज़ कनाल पार कर रहा था कि मैं तुरन्त वापस लौट जाऊँ। मैने तार की परवाह नहीं की और मेरे मित्रों में भी जाति से बहिष्कार किए जाने की परवाह नहीं की। उस समय का प्रचलन था कि इंग्लैड की रानी विक्टोरिया बकिंग्धम महल में भारतीय छात्रों से वर्ष में एक बार मिलती थी। इस नीति के अनुसार वहॉ पढ़ाई करने वाले भारतीय नवयुवकों को ब्रिटिश ताज के प्रति अपना दृष्टिकोण बनाना था। हर छात्र को रानी से मिलने के लिए 5 मिनट का समय दिया जाता था जब बिशन नारायन दर की बारी आई, रानी उनकी योग्यता और ज्ञान से इतनी प्रभावित हुई कि उनकी बातचीत 30 मिनट से आगे होती रही और महारानी उन्हें छोड़ने द्वार तक आई जो नौजवान बिशन नारायन दर के लिए वास्तव में गौरव की बात थी जो कि ब्रिटिश शासन की प्रजा थे।

अपने इंग्लैड प्रवास में बिशन नारायन दर ने स्वतंत्रता के सही अर्थ समझे उन्होंने यह अंतर भी समझा कि स्वतंत्र देश के नागरिकों को क्या अधिकार हैं और परतंत्र देश जिस पर विदेशी सत्ता है उसकी प्रजा पर क्या अत्याचार हैं। उन्होंने निश्चय किया कि वह भारतीयों के प्रति होने वाले अन्याय के प्रति अभियान चलाएँगे जिसमें उन्हें दो नम्बर का नागरिक समझा जाता है उन्होंने अपनी अंतिम साँस तक इस अन्याय से लड़ने का प्रयास किया कि अपने देशवासियों को उनके अधिकर जैसे अन्य योरोपियन नागरिकों को उनके देश में हैं, कि वे सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर सकें। क्योंकि उन दिनों भारतीयों के प्रति ब्रिटिश लोगों का व्यवहार बहुत बुरा था। सामान्यतः उन्हें हर प्रकार का अपमान सहना पड़ता था।

स्न 1887 के जुलाई में बिशन नारायन दर इंग्लैड से कश्मीरी मौहल्ले बैरिस्टर बनकर वापस आए। लेकिन उन्हें अपनी ही बिरादरी का शत्रुतापूवर्क वातावरण का सामना करना पड़ा था क्योंकि समाज के लोग उन्हें स्वीकार करने को तैयार न थे। उनका विचार था कि समाज की इच्छाओं के विपरीत बिशन नारायन दर ने विदेश की समुद्र द्वारा यात्रा करके जधन्य अपराध किया हैं यहाँ तक कि उनकी माँ ने भी उन्हें कश्मीरी मौहल्ले के पुश्तैनी घर में कठिनाई से प्रवेश करने दिया। अंत में उनका बिरादरी से बहिष्कार कर दिया गया। यह मनोरंजक बात है कि, पं. त्रिभुवन नाथ सप्रू 'हिज्र' जो प्रगतिशील विचारधारा के उर्दू शायर थे ने पं.बिशन नारायन दर की प्रशंसा और उनकी सफलताओं पर कई कविताएँ लिखी। उन्होंने कई लेख भी लिखे, कट्टरवादी कश्मीरी पंडितों के विरोध में उन्होंने बिशन नारायन दर को नीचा ठहराया। बिशन नारायन दर के कुछ प्रशंसकों ने कट्टरपंथी रूढ़िवादियों की हँसी उड़ाई क्योंकि कुछ कट्टरपंथी कश्मीरी पंडित रेल के डिब्बों में मुसलमानों के साथ यात्रा करते पाए गए थे। वे मुसलमानों द्वारा पकाया भोजन खाते और मुसलिम बेग़में साथ रखते जिसे वे अपनी रईसी और शान शौक़त समझते। ऐसे लोगों में पं. मेहताब राय गुर्टू, पं.श्याम प्रसाद तैमिनी, पं.महराज नरायन सर्राफ, पं. लक्ष्मी नारायन दर, पं.जवाहर कृषन ज़ारू इत्यादि जब उस समय ऐसा माना जाता था कि कश्मीरी पंडित केवल कश्मीरी पंडित रसोइए द्वारा पकाया भोजन ही करेंगे, किसी दूसरी जाति समूह के आदमी द्वारा बनाया नहीं।

मुंशी नवल किशोर के बारे में जानकारी रूचिकर है कि उन्हें छापने की कला का कुछ ज्ञान लाहौर से था। वह 1857 के विप्लव के बाद वहाँ से लखनऊ आए थे। उन्होंने आग़ा मीर की ड्योढ़ी के छापेखाने में काम किया उसे पं.टीकाराम दर चलाते थे और वह वहाँ बतौर अप्रेन्टिस थे। ऐसा कहा जाता है कि बाद में मुंशी नवल किशोर ने वह छापा–खाना पं. देवी प्रसाद दर से जो टीकाराम दर के उत्तराधिकारी थे, ख़रीद लिया। मुंशी नवल किशोर ने लखनऊ से उर्दू का अख़बार जो 'अवध अख़बार' कहलाया, छापना शुरू किया। बैरिस्टर पं. बिशन नारायन दर ने भी कुछ समय तक सम्पादक का काम किया । उनके क्राँतिकारी लेख और तेज़ भाषा ने बहुत से नौजवानों को स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। लोग यथा दादा भाई नौरोज़ी, बाल गंगाधर तिलक , गोपाल कृष्णा गोखले, लाला लाजपत राय, पंडित मदन मोहन मालवीय,बाबू गंगा प्रसाद वर्मा, डाक्टर ऐनी बेसेन्ट उनके निकट साथी और बड़े प्रशंसक थे। लेकिन ये लोग भारत की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे थे, संवैधानिक तरीक से ,जबकि 'सत्याग्रह' और असहयोग द्वारा स्वतंत्रता के लिए लड़ना बाद में गांधी जी द्वारा अपनाया गया जब वह दक्षिणी अफ्रीका से भारत सन् 1915 में आये। यद्यपि बिशन नारायन दर क्राँतिकारी विचारों के थे किन्तु वह 'आर्य समाजी' नहीं थे। वे स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रशंसक थे। यहाँ यह जानना रूचिकर होगा कि सन् 1873 में, लाहौर में आर्य समाज की स्थापना से तीन वर्ष पूर्व, स्वामी दयानन्द सरस्वती को लखनऊ के तहसीलदार पण्डित दयानिधान गूंजर के घर निमंत्रित किया गया था। जहाँ एकत्रित कश्मीरी पण्डितों के समूह में उन्होंने भाषण दिया था कि हिन्दू धर्म को वेदों के अनुसार समझा जाना चाहिए कि स्वामी जी के व्यक्तित्व का (एयोरा–प्रभा मंडल) और जीवन के प्रति विचारधारा का बिशन नारायण दर के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा और उनके अंग्रेजी के भाषणों में उसका प्रतिबिम्ब मिला।

यद्यपि बिशन नारायन दर, ब्राहमणवाद के घोर विरोधी थे किन्तु फिर भी उनकी उर्दू की शायरी में उनके स्वयं कश्मीरी पण्डित होने पर नाज़ था। कश्मीर में अपने पूर्वजों के लिए प्रशंसा थी जोकि "लेकिन किसी तरह न मिटे नाम ए ब्राहमन" से स्पष्ट होती है।

कश्मीर में ज़ैनुल आबिदीन की मृत्यु के बाद के समय में जो अत्याचार कश्मीरियों को सहने पड़े उनके लिए उन्हें गहरी संवेदना थी।

"अपने धर्म के लिए, हमारे सैकड़ों लोगों ने जान दे दी, वे हम से सब कुछ ले सकते है, केवल हमारा धर्म नहीं"।

अपनी एक कविता में उन्होंने कश्मीर से पलायन को देश निकाला कहा है। क्योंकि उनके अनुसार हमारे लिए कश्मीर छोड़ना ऐसा था जैसे आत्मा शरीर पीछे छोड़ आई हो।

है आर्ज़ू दिल की तेरी आर्ज़ू करें,
जब तक जवान है तेरी गुफ़्त्गू करें।
गुल से अज़ीज़ हमको तेरा ख़ार ख़ार हैं।
मुद्दत से इश्तियाक़ है एक बार देख लें।
बुलबुल है चश्में शौक़ में गुलज़ार देख लें।

एक दिन बिशन नारायन दर को एक पार्टी में जाना था, जो उनके कुछ यूरोपियन मित्रों ने उनके सम्मान में दी थी। इस अवसर पर उन्होंने रात्रि भोज में तीन पीस वाला काला सूट पहना, जो उस बस्ती के रूढ़वादी पण्डितों की पसंद नहीं थी। एक कश्मीरी पण्डित कवि ने उनका मज़ाक बनाने के लिए एक शेर उर्दू में पढ़ा, चूंकि उनका रंग काला था।

हज़रते दर ने भी, आज एक सरमाया पहना है, काली रंगत पर स्याह जामें का क्या कहना है। वह एक सच्चे देशभक्त थे। मातृभूमि से उन्हें बहुत प्यार था, जो उनकी उर्दू में लिखी इनकी पंक्तियों से प्रकट होता है –

हबीब–ए–मुल्क हैं, अपने वतन से हमको उल्फ़त है,
तमन्नाये विलायत क्या करें, हिन्दोस्तानी होकर।

एक बार वह दिल्ली एक मुशायरे में गये। अपने दिल्ली प्रवास में वह कुछ ऐतिहासिक इमारतों को देखने गये। वह कुतुबमीनार पर चढ़े ताकि शहर का विहगम दृश्य देखें। जब वह कुतुबमीनार से नीचे उतरे तो उनके एक साथी उर्दू शायर ने उनसे पूछा, "पण्डित जी क्या देखा। बिशन नारायण दर ने अपने शायराना ढंग से जवाब दिया –

दुनिया की हमने अजीब हस्ती देखी,
पहुंचे जो बुलन्दी पे पस्ती देखी।
मिनार–ए–कुतुब से हमने डाली जो निगाह
उजड़ी हुई दिल्ली की भी बस्ती देखी।।

बिशन नारायन दर महान चिंतक, प्रसिद्ध जानकार और ऐसे लेखक थे, जिन्होंने बहुत लिखा। विशेषकर उर्दू के प्रसिद्ध शायर थे। सामाजिक सरोकार के विषयों पर उन्होंने अनेक लेख अंग्रेजी में लिखे तथा अंग्रेजी में कुछ पुस्तकें भी उनकी उर्दू की शायरी "बहार–ए–गुलशन कश्मीर" के दो खंडों में सन् 1931 और सन् 1932 में छपीं। बिशन नारायण दर की क्रांतिकारी भाषणों ने उन्हें उस समय के बड़े–बड़े कांग्रेसी पार्टी के नेताओं के समकक्ष ला दिया। इंडियन नेशनल कांग्रेस (आई.एन.सी.) के सन् 1887 के इलाहाबाद सेशन में उन्हें कांग्रेस के प्रमुख नेताओं ने उनकी भाषण क्षमता और अंग्रेजी भाषा की पकड़ पर सराहा। सन् 1914 में इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काउसिंल के सदस्य बने। यद्यपि सन् 1904 के बाद राजनीति में अपनी गिरती सेहत के कारण अधिक सक्रिय नहीं रहे, फिर भी उनके नज़दीकी मित्रों और प्रशंसकों को लगा कि उनकी योग्यता को व्यर्थ नष्ट न होने दिया जाय। कलकत्ते में सन् 1911 दिसम्बर में होने वाले सत्ताइसवें प्री–लिमिनरी सेशन की अध्यक्षता करने का अनुरोध किया गया, जिसमें वह एक मत से कांग्रेस पार्टी के प्रेसिडेन्ट निर्वाचित हुए। दुःख का विषय है कि इस महान चिंतक की जीवन संध्या घोर निराशा में बीती क्योंकि जिस सहयोग और

समर्थन की आकांक्षा उन्हें अपने समाज से थी वह उन्हें नहीं मिले ,जिनके लिए वह सम्पूर्ण जीवन अतृप्त रहे। फलस्वरूप उन्हें क्षय रोग हो गया तथा 9 नवम्बर सन् 1916 को मात्र 52 वर्ष की अल्पायु में चाइना बाजार वाले नए घर में उनका निधन हो गया। सी.वाई. चिंतामणि के अनुसार वह अपने समय के नेताओं में सबसे ज्ञानी व्यक्ति थे फिर भी बहुत विनम्र और महान लेखक थे जिनके लेख आज भी प्रसिद्ध हैं। ऐसी धारणा थी कि भारत के महान साहित्यिक, राजनैतिक नेताओं में एक बिशन नारायण दर थे और दूसरे रास बिहारी घोष।

ऐसा माना जाता है कि उस समय की कुछ महिलाओं के साथ उनका घनिष्ट सम्बन्ध था, किन्तु उनका किसी से विवाह का ज़िक्र नहीं मिलता। समाज के कुछ वरिष्ठ लोगों का विचार है कि उनका विवाह दिल्ली के सीताराम बाजार के पण्डित जानकीनाथ सफ़ाया की पुत्री लक्ष्मी से हुआ था। पण्डित बिशन नारायन दर का सबसे छोटा भाई रतन नारायण दर सन् 1889 में फैज़ाबाद में पैदा हुआ था, जहाँ उनके पिता पण्डित किशन नारायन दर सब जज नियुक्त थे। लखनऊ में अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद, कानपुर के एक सरकारी स्कूल में 17 जुलाई 1917 में शिक्षक नियुक्त हुए। सीतापुर में सन् 1926 में वह डिप्टी इंस्पैक्टर ऑफ स्कूल्स नियुक्त हुए। वह भी उर्दू के शायर थे। उन्हें अपने समाज में विवाह करने में कोई कठिनाई नहीं हुई। उनके बड़े भाई के साथ जाति बहिष्कार का जो कलंक था, उसका उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। समाज के सहयोग से उनका सुखी दांपत्य जीवन बीता। उनका बेटा पण्डित चाँद नारायण दर , इंदिरा नगर लखनऊ में रहता था।

यद्यपि पण्डित बिशन नारायण दर अभी तक लखनऊ के ऐसे प्रथम व्यक्ति हैं, जो इंडियन नेशनल कांग्रेस के प्रेसिडेट बने, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में उनकी प्रमुख भूमिका रही फिर भी उनके सम्मान में लखनऊ में उनका कोई स्मारक नहीं बनाया गया जबकि वह असली 'भारत रत्न' थे। हमारे आजकल के हर प्रकार के नेताओं ने इस महान सपूत को बिल्कुल भुला दिया है।

यहाँ पर यह भी उल्लेखनीय है कि , दिनांक 28 दिसम्बर 1985 को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सौ वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में भारतीय डाक–तार विभाग ने पंण्डित बिशन नारायण दर के चित्र सहित चार टिकटों का एक कम्पोजिट सेट जारी किया।

Dear Sir,
I came to know that Sharga is not keeping well..
Whenever you have time, plse give this print to him.

Thanks & Regards,
Roshni Tankha

----- Forwarded by Roshni Tankha/LNTENC on 05/22/12 09:54 AM -----

From: ASHOK PANDIT <pandit_ashok@hotmail.com>
To: Roshni Tankha <roshni_tankha@lntenc.com>,
Cc: Ramesh Suthoo <rnsuthoo@yahoo.com>
Date: 05/22/12 08:53 AM
Subject: Some more ancestral family information for you...

Dear Roshni,

I have some more information for you.
I was recently in Gurgaon visiting Ramesh Suthoo when he showed me some very old manuscripts he had recently recovered from his archives in Cuttack.

One of them showed the lineage of our family beyond Durga Prasad and Mahtab Rai who had come to Orissa and had settled down here.

I was under the impression that Aftab Ram was the father of the two brothers Mahtab Rai (Darpan/Suthoo family) & Durga Prasad (Pandit/Tikku family).

His document showed that Mahatab Rai's father was Jeevan Ram.
Jeevan Ram's father was Hari Das.
Hari Das's father was Bhaskar Rao.
Bhaskar Rao's father was Aftab Ram (Rao?) Pandit.

So, the Pandit & Darpan family trees will be like this : (12 known descendants)

PANDIT TREE	**DARPAN TREE**
1. Aftab Ram Pandit	1. Aftab Ram Pandit (left Kashmir & came to India?)
2. Bhaskar Rao	2. Bhaskar Rao
3. Hari Das	3. Hari Das
4. Jeevan Ram	4. Jeevan Ram (came to Orissa with two sons?)
5. Durga Prasad	5. Mahtab Rai
6. Kanhaiya Lal Pandit	6. Gopinath Suthoo
7. Behari Lal	7. Baidya Nath
8. Ganesh Lal	8. Harihar Nath
9. Moti Lal	9.Shyam Sunder Nath
10. Ashok Pandit	10. Rameshwar Nath
11. Vivek Pandit & Sanjay Pandit	11. Anant Nath
12. Nirvaan Pandit	12. (son yet to be born)

Best wishes,
Ashok Pandit

From: pandit_ashok@hotmail.com
To: roshni_tankha@lntenc.com
Subject: RE: Information needed
Date: Wed, 18 Apr 2012 03:25:07 +0000

Dear Roshni,

My father Moti Lal Pandit went to Mission School in Cuttack and then attended Ravenshaw College in Cuttack.
He did his BA (Sanskrit) Honours from Ravenshaw. He was a tennis champion and the College Tennis Cup was called the 'Moti Cup' after him.
He completed his law course but his father did not allow him to sit for the bar exam fearing that he may become a lawyer and not pursue his 'zamidari' obligations.
He was Member of Parliament (Rajya Sabha) in 1952 from Cuttack. He later became Chairman of the Orissa Public Service Commission.

My grandfather, Ganesh Lal Pandit was educated and had a bachelor and law qualification from Cuttack. He wrote excellent english and hindi.
We do not have details of his schooling or college, but I suppose he studied in Ravenshaw College in Cuttack. He was a Zamindar.
He was a member of the Bihar & Orissa Legislative Council under the British in 1920 along with Utkalmani Gope Bandhu Das, the Father of Orissa.
I have sent you earlier, a photograph of the Council taken in Ranchi in 1920.
Ganeshlal was adopted from a Rainawadi family of Srinagar, Kashmir by Behari Lal at age 2 years; he married Girja Rani Mushran who was the grand daughter of Raja Dina Nath Madan of Lahore. Her two sisters, one was married into the 'Adib' family of Bombay (actor Raja Adib's brother) and the other was married to the father of Jeevan Nath Dar (of Scindia School, Gwalior & Netarhat Public School, Ranchi fame), grandfather of A N Dar (Bharat Dar) who taught at Doon School. Her father, a Mushran went to Africa under the British Raj, to seek a fortune as a railroad contractor but was killed by a lion in the African jungle at an early age!

My great grand father Pandit Behari Lal Tikku was a great Sanskit scholar, also very well versed in english & oriya and wrote many books including the famous 'Behari Geeta' and 'Behari Karmakanda' for the Oriya people which are found in most Oriya households even today.
He assembled a 'Pandit Sabha' for many years, in which about a dozen renowned sanskrit scholars would meet several times a week at our residence 'havelli' in Cuttack and translate great Sanskrit literature and religious texts from his extensive library, from Sanskrit to Oriya, mostly in verse. I have sent you a copy of the Pandit Sabha photo earlier.

He was a very educated & learned man, known for his scholarship and was given the title of 'Pandit' by the citizenry which became our family surname thereafter. He was a Zamindar, one of the biggest landlords of Orissa having owned over 100,000 acres of land in & outside Orissa.
We do not know which school or college he attended. It is quite likely that he or his father, Pandit Kanhaiya Lal Tikku donated the land for building Ravenshaw College.
He, along with Utkalmani Madhu Sudan Das and the Raja of Kanika had aquired all the mortgaged lands belonging to the Jagannath Temple in Puri from a British auction held in Calcutta and donated these back to the temple/ Raja of Puri.

Pandit Kanhaiya Lal Tikku's father Pandit Durga Parshad Tikku as well as his brother Pandit Mahtab Rai Suthoo (surname changed at a later date) and his grand father Pandit Aftab Ram Tikku (who migrated from Kashmir to Orissa), were all well versed in Arabic and Pharsi languages and were practicing lawyers and 'petition writers' in the Moghal Courts. Thereafter, they became 'zamindars' under British rule. Being the only hindu lawyers in Orissa in Moghal times, all affluent Oriya people took their legal services for court cases.
They made huge sums of money from their profession and became bankers before buying lands and becoming landlords.

Pandit Durga Parshad purchased the Palace of the Maratha king of Orissa (after the Moghals and before the British, who drove out the Marathas from Orissa) which is the 'Cuttack haveli' still in our possession, which was divided 10 annas and 6 annas between the Suthoo and Pandit families after Durga Parshad died. Ramesh Suthoo owns approx. 30,000 sq ft and I own about 26,000 sq ft of living space of the haveli at Chandnichowk in Cuttack. Ramesh Suthoo is presently trying to dispose off/sell his portion of this historic haveli.

Best wishes,
With kind regards to Shaghaji,
Ashok Pandit
(presently visiting at my daughter's place in Delhi)

To: pandit_ashok@hotmail.com
Subject: Information needed
From: Roshni_Tankha@lntenc.com
Date: Tue, 17 Apr 2012 09:41:38 +0530

Dear Ashokji,

How are you?
I was talking to B N Shargaji. and as you are aware that he is writing an article on Babu Beharylal Pandit. He need some more information to complete this article and as your are the key source, i would request to give the same so that i can convey him to complete the article.

He wants to know, name of babu ganeshi lal pandit's educational qualification, his profession..and who was his wife..and his wife's father's name.

And also name and educational qualification of Motilal pandit means your father.

Mail me the details at your convenience.

Regards,
Roshni Tankha

Disclaimer :This email and any files transmitted with it are intended solely for the use of the addressee(s) only and may contain confidential and/or privileged information. If you are not the addressee, then this message is not intended for you and be advised that you have received this email in error and that any use , dissemination , forwarding, printing or copying of this email is strictly prohibited. In such case please notify the sender and delete this email and any attachments with it from your system immediately.Receipt of this email by you shall not give rise to any liability on the part of Larsen & Toubro Limited
Disclaimer :This email and any files transmitted with it are intended solely for the use of the addressee(s) only and may contain confidential and/or privileged information. If you are not the addressee, then this message is not intended for you and be advised that you have received this email in error and that any use , dissemination , forwarding, printing or copying of this email is strictly prohibited. In such case please notify the sender and delete this email and any attachments with it from your system immediately.Receipt of this email by you shall not give rise to any liability on the part of Larsen & Toubro Limited

Babu Bihari Lal Pandit

The First Kashmiri Oriya Scholar

By Dr. B.N. Sharga

Sometimes in this mad world strange things happen which one cannot imagine in his life. The British came to India as traders during the reign of the Mughal emperor Jehangir, but after the battle of Plassey which took place in 1757 in which Nawab Siraj-ud-Dula of Bengal was defeated by the British they became a major political player in the country and gradually our masters by adopting their well known policy of divide and rule. Thus, Robert Clive who was Charge-de-Affairs of the East India Company at that time declared himself to be the first British Governor of Bengal.

Babu Bihari Lal Pandit

The British then in order to govern the country effectively formed three important Presidencies at the three major port cities of India Calcutta, Madras and Bombay. The Bengal Presidency was having a very big territory under its control touching its border in the east with Burma, in the north with China and in the west with Awadh. The British for the proper and effective control of this vast territory and for its better administration separated Assam and Syllhet from it in 1874. Lord Curzon in 1905 further divided Bengal into East Bengal and West Bengal with the aim to have an effective control over this area. But this step of the British was very strongly resented by the Bengali people so much so that in 1911 the British had to annul this partition of Bengal. The British instead created a new state known as Bihar in 1911. On 1st April, 1936 another new state known as Orissa was carved out from this territory for the benefit of Oriya speaking people which was the first linguistic state to be formed in the country on the basis of any language. Babu Ganeshi Lal Pandit who was honourable member of the joint Legislative Council of Bihar and Orissa played an important role in the creation of this new state. His father Babu Bihari Lal Pandit by that time had already became a household name for the Oriya speaking people because of his profound knowledge of the Oriya language and his monumental work of translating Hindu religious texts and scriptures in the Oriya language for the benefit of Oriya speaking people of the area specially the translation of Karma Kand which became extremely popular.

The ancestors of Babu Behari Lal Pandit were originally Tikkus and residents of Tikku Mohalla of Srinagar district in Kashmir. His immediate ancestor Gulab Rai Tikku a merchant by profession used to live in Purushiyar locality of Srinagar. He was a highly orthodox and superstitious person. His house was located on the bank of the Jhelum

river. Being a god fearing person he used to go every morning to Hari Parbat for his prayers and other religious rituals with great sincerity and devotion to have the blessings of the divine power. Every year during the rainy season his house used to become inaccessible due to flood waters of the Jhelum river making the lives of its inhabitants quite miserable. One night while he was having a sound sleep he saw goddess Ragya in his dream who instructed him to construct an earthen embankment on the bank of Jhelum river to protect his house from floods. The very next day being an ardent disciple of the goddess he started the construction of the earthen embankment as per the wishes of the goddess to protect his house from the fury of the floods in the Jhelum river. He became so much fascinated with this divine phenomenon of goddess Ragya Bhagwati appearing in his dream that he changed his original surname Tikku and in its place adopted a new surname Sutthoo which means an embankment in the Kashmiri language.

The private boat of the Pandit family in the Bay of Bengal

Gulab Rai Sutthoo had four sons who were Mehtab Rai, Aftab Ram, Daya Ram and Sahib Ram. His two sons Mehtab Rai who was born around 1784 and Aftab Ram who was born around 1786 then came out from the Kashmir valley on the pilgrimage in the beginning of the 19th century. After covering the troublesome journey through thick forest and rough mountainous terrain they finally landed in the imperial capital Delhi around 1804 during the rule of Mughal emperor Shah Alam-II(1759-1806) and started living with their other family members in Bazaar Sita Ram which was a centre of Kashmiri Pandits' population in Delhi then.

After sometime finding the conditions in Delhi not to their liking as the city was facing regular attacks and invasions by the Islamic forces both Mehtab Rai and Aftab Ram then started their onward journey and went to Mathura a big centre for Hindu pilgrimage. They paid their obeisance at different temples in that city and fully enjoyed its religious ambience and fervour. They wholeheartedly participated in the various religious festivals and congregations for which the city is famous all over the country.

From Mathura, both these brothers then proceeded to another important city Haridwar to take a holy dip in the river Ganges there which is considered to be a must for every devout Hindu to attain salvation. Both Mehtab Rai and Aftab Ram stayed in Haridwar for couple of years and paid a visit to different places of religious importance around this city. From Haridwar they went to Faizabad to pay a visit to Ram Janam Bhoomi site at Ayodhya. They stayed there

at Faizabad for sometime and visited different shrines of historical and religious importance like Hanuman Garhi, Chandra Hari Mahadev temple, Sankat Mochan, Swarg Dwar, Janki Mahal, and Sita Rasoi, etc. Mehtab Rai and Aftab Ram then came to Lucknow from Faizabad around 1810 during the rule of nawab Sadat-Ali-Khan(1798-1814) in Oudh and started living with their family in Kashmiri Mohalla which was the biggest centre of the Kashmiri Pandits population in northern India at that time in that period Lucknow was quite peaceful and fast growing city with affluence everywhere as nawab Asaf-ud-Daula who was a liberal ruler was spending lavishly on its reconstruction as the capital city and the charm of Delhi was decreasing fast due to regular invasions and bloodshed. Lucknow being located far away from the borders of the country never faced such major invasions in its long history. So, it was never a walled city. So, Kashmiri Mohalla which came into existence between 1775 and 1778 on a high mound of land surrounded by beautiful gardens and water bodies became the most favourite destination for Kashmiri Pandits outside the Kashmir Valley where the Kashmiri Pandits employed in the Awadh court on high posts built big airy havelis based on Indo-Persian architecture for the lavish living of their family members.

The mansion of the Pandit family at Chandni Chowk, Cuttack

Both Mehtab Rai and his brother Aftab Rai fully enjoyed the hospitality extended to them by their community members during their stay at Kashmiri Mohalla in Lucknow. They also took part in some religious congregations before leaving for Allahabad to have a holy dip there in the confluence of Ganges and Yamuna rivers. They liked the ambience of the locality very much as it had a considerable population of Kashmiri Pandit Purohits and cooks as well and the pattern of living was almost similar to that of Habba Kadal in Kashmir. The local residents had their close relatives in Kashmir and so they used to maintain a very close link with their mother land through regular visits from both the sides.

Kashi is being regarded as the most pious and holy city by the Hindus. It is believed that it is resting on the trident of Lord Shiva. The Kashmiri Pandits are basically Shaivites. So, both Mehtab Rai and his brother Aftab Ram went from Allahabad to Benares (Varanasi) to pay their obeisance at the historic Vishwanath temple. They stayed with their relatives at Ramnagar who were enjoying the patronage of Kashi Naresh at that time. From Benares they proceeded to Calcutta which was the capital of East India Company at that time. They paid a visit to Sunderbans where they met with their acquaintances and enjoyed the hospitality extended to them. From Calcutta they took a boat for

Orissa which was a part of Bengal Presidency as railway line was not developed by that time. Both these brothers landed at a marshy land known as Bara peda and took a bullock cart for their onward journey to Puri as it was the only transport available to cover that distance. They somehow completed this arduous journey facing a lot of trouble and finally reached the temple town of Puri and paid their obeisance to Lord Jagannath. They became so much impressed by the religious ambience of the place that they dropped the idea of going back to their land of birth and instead decided to settle down permanently at this place with their family members.

Both Mehtab Rai and his brother Aftab Ram had a good knowledge of Sanskrit and Persian language. So, to earn their livelihood they started writing the petitions of the general public in the lower Diwani Adalat which was a sort of subordinate court of the higher court at Fort Williams in Calcutta and was established at Puri to decide petty crimes and small land disputes. Through this profession of writing petitions, both of them earned a good amount of money which they invested in purchasing landed properties for their better living. The local Oriya people gradually started respecting them for their various philanthropic acts. They purchased a big plot of landof about 20,000 square feet carpet area in Chandni Chowk, Cuttack on which they built a huge palatial mansion consisting of 20 rooms and a big courtyard. Aftab Ram had a son Durga Prasad who was born in 1810 and died in 1841 at the young age of about 31 years. Mehtab Rai died around 1842 at the age of about 56 years.

It is interesting to note here that the ruler of the princely estate of Kila Darpan in Orissa somehow became a pauper due to which he could not pay his share of the land revenue as per agreed terms and conditions to the British who then confiscated his entire estate and put it on auction to realize the pending debt. Both Mehtab Rai and Aftab Ram then paid the pending dues to the British and purchased the entire estate and thus became a ruler far away from the land of their birth. Durga Prasad Sutthoo had a son Kanhaiyya Lal Sutthoo who was born at Chandni Chowk in Cuttack around 1830. He was a pragmatic and farsighted person. He further consolidated the family fortunes.Kanihaiyya Lal Sutthoo had a son Babu Bihari Lal Pandit who was born around 1850. Babu Bihari Lal Pandit was a highly religious and orthodox person. He never believed in idle gossiping. He had his education in the prestigious The Presidency College of Calcutta. He had equal command on Sanskrit and Oriya language. Being the devout and religious person he read all the Hidu scriptires very thoroughly. As he was a wealthy person and a big landlord so he employed a dozen script writers to take his dictations in translating the original Sanskrit text into the Oriya language for the benefit of local Oriya speaking

people. He used to sit in his baithak after taking the breakfast to dictate the translations of various Hindu religious texts. It was actually a monumental work on which he spent a big amount of money to get all these translations printed in the form of books which he used to distribute free of cost to the local people. His various such philanthropic acts made him very popular among the local people. Due to his profound knowledge about the Hindu religion the local residents started calling him as Panditji out of sheer respect. He then adopted Panditji as his new surname in place of the original surname Sutthoo. Babu Bihari Lal Pandit being a big landlord had to maintain a big army of servants to look after his various landed properties. He had a big collection of antique armoury like bows and arrows, daggers, swords, spears, foreign made pistols, revolvers and guns besides various other antique articles. He was also maintaining a private boat in Bay of Bengal. H was a great lover of sports and a very strict disciplinarian. Simple living and high thinking was the main motto of his life. He never tolerated loose talks. He was always taken in high esteem by the local people. He played an important role in restoring the lands which were mortgaged by the Trust of Jagannath Temple of Puri.
Babu Bihari Lal Pandit was a man of many dimensional personalities. He was a keen observer, a meticulous planner and above all a very hard task master. He was a voracious reader and had a big collection of books on different subjects in his personal library. The ruler of Puri used to give him a great respect for his profound knowledge about the Hindu religion and philosophy. His wife Manorama was very supportive in his various pursuits due to which he could pursue all his ventures with great ease without any mental blockade. Though he was a sort of feudal lord of that era yet he always recognized the dignity of labour and duly rewarded all those who were of laborious nature. Many youngsters of that period used to take him as their role model. He was very fond of organizing religious congregations and festivals on which he used to spend quite lavishly. He authored many books mostly on Hindu religion and philosophy. He always gave due importance to time management as work was worship for him.
Babu Bihari Lal Pandit unfortunately had no son. He had only three daughters: Mohan Rani, Beno Rani and Munni Rani. In that era the daughters had no right of inheritance in the ancestral property. So, to look after his vast landed properties he went to his native place Kashmir to adopt a son from one of his relatives family. Thus, in 1891 Babu Bihari Lal Pandit adopted Ganeshi Lal who was hardly 2 years old at that time. Ganeshi Lal Pandit was brought up at Chandni Chowk, Cuttack and also had schooling in the same city. Ganeshi Lal Pandit had a political bent of mind. He became an honourable member of the joint Legislative Council of Bihar and Orissa and played a key role in

the creation of the state of Orissa in 1936. Babu Bihari Lal Pandit died in 1911 after living a king size life. Ganeshi Lal Pandit had two sons: Moti Lal and Heera Lal who died quite young besides 3 daughters Swaroop Kumari married with Brij Kishen Zutshi of Kashmiri Mohalla Lucknow, Jagat Kumari married with Raj Nath Ganjoor of Rani Katra Lucknow and Roop Kumari married with Bishen Narain Channa of Delhi.

Vinayak Damodar Bhave who was born in 1895 at Colaba Bombay became popularly known as Acharya Vinoba Bhave. He was considered as the spiritual heir of Mahatma Gandhi. He started the famous Bhoodan Movement in 1951 for which he travelled throughout the length and breadth of the country on foot asking people to donate their extra land to him for a noble cause. Vedre Ram Chandra Reddy of the village Pochampally in Andhra Pradesh was the first wealthy landlord of that state who donated his village to Acharya Vinoba Bhave. Moti Lal Pandit also came into magical spell of Acharya Vinoba Bhave and donated his village to him in Orissa. Thus, he became the second person to do the same.

Source: http://ikashmir.net/bnsharga/biharilalpandit.html